रफ़्तार

जिंदर

रफ़्तार

पार्टी देर रात तक चली थी। पूनम ने बीसेक करीबी दोस्तों को मोबाइल पर आने का न्यौता दिया था। आ तीस गए थे। खूब रंग जमा था। इस घर में यह अपने किस्म की

पहली पार्टी थी। बच्चों की खुशी देखने वाली थी। ज़िंदगी में पहली बार मुझे अहसास हुआ था कि जवानी का भी अपनी ही तरह का नशा होता है।

कमलकांत ने कंप्यूटर के अटैच्ड स्पीकरों से डैक का काम लिया था। विदेशी संगीत था। विदेशी नृत्य था। कुछ भी रस्मी नहीं हो रहा था। कोई ऊँच-नीच की भावना नहीं थी। सब खुश थे क्योंकि पूनम के मित्र हरसूरत को आस्ट्रेलिया का वीज़ा मिला था और पूनम को पहली नौकरी। नाचने के लिए भी किसी पर ज़ोर नहीं डाला गया था। सब कुछ एक रौ में हुआ था। ऐसा लगता था मानो तीस जने मूल रूप में एक ही हों।

जब मुझे बिस्तर नसीब हुआ, उस समय रात्रि के बारह से ऊपर का समय हो गया था। मैं बुरी तरह थक गई थी। सुदेश की तो यह पुरानी आदत है कि वह बैड पर पड़ते ही सो जाता है। मैंने भी जल्दी सोने की आदत डाल रखी है। लेकिन आज मुझे नींद नहीं आ रही। मन बेचैन था।

फिर मुझे खीझ-सी आने लगी। इसमें गुस्सा भी शामिल हो गया था। मुझे लगा मानो मैं हूँ ही नहीं। अब मैं कुछ भी नहीं हूँ। यह कैसी स्थिति है। इसका कारण माँ थी? मैं थी? या बेटी पूनम? या पूनम का मित्र हरसूरत? इसके बारे में क्या कहूँ? मेरे सामने माँ ही आ गई। मन उतावला हो उठा यह कहने को कि, "जा माँ जा, अपने घर जा।" पर, यह कहना क्या इतना आसान था। इन दिनों तो माँ असहाय, लाचार और बेआसरा थी। मैं जानती थी कि जब माँ को उसके लाडले बेटे न सँभाले, तब बेटी ही उसका अंतिम सहारा होती है। यही सोच अक्सर मेरा मुँह बंद कर दिया करती।

पूनम के दोस्त आते तो सामने वाले कमरे में बैठी माँ असहज हो उठती। मेरे लिए इन पलों में मुसीबत आ खड़ी होती। मुझे हरपल चिंता सताती रहती कि कहीं वह हरसूरत को कुछ ऊँचा-नीचा न बोल दे। वह मेरी ओर कड़वी नज़र से झाँकती। अपने बैड पर बैठे-बैठे बड़बड़ाती रहती, "है कोई इसे लाज-शरम। क्या कुत्ता-खाना डाल रखा है। मीतो ने बेटी सिर पर चढ़ा रखी है। इसे पता तो तब चलेगा जब ये कोई गुल खिलाएगी। ऐसी लड़कियाँ ड्राइवरों के साथ भाग जाया करती हैं...।" मैं उसका ध्यान दूसरी तरफ लगाने की मंशा से उसके कमरे में जाती तो वह होंठ दबा लेती। मैं उसकी रम्ज़ समझ लेती। उसकी नज़रें पूछ रही होतीं कि नौजवान लड़की-लड़का एक साथ क्यों बैठने दिए। एक छत के नीचे अकेले तो भाई-बहन भी नहीं बैठने देने चाहिएँ। क्या मैं अंधी हो गई हूँ? वह मुझसे और भी बहुत कुछ पूछना चाहती, मेरी जवाबतलबी करना चाहती, पर पता नहीं क्या सोच कर चुप लगा जाती।

माँ नहीं समझती कि अब उसके वाले समय नहीं रहे। मेरे वाले समय नहीं रहे। पूनम को वही बनना है, जो वह बनना चाहती है। वह किसी प्रकार की जबरदस्ती सहन नहीं करती। माँ को यह सोचना चाहिए कि उसके वाले समय उसके साथ गए। मेरे वाले मेरे साथ गए। पूनम मेरा हाथ पकड़कर हर जगह नहीं चल सकती। उसने जहाँ भी जाना है, अकेले ही जाना है। वह जानती है कि अगर उसे अपना कॅरियर बनाना है तो इस संबंध में फैसला भी उसी को लेना है। माँ चाहती थी कि पूनम उसके जैसी बने। उसकी शिक्षाओं, नसीहतों को माने। बंदिशों में रहे। पर पूनम की अपनी निजी ज़िंदगी है। वह किसी दूसरे, तीसरे की दख़लअंदाजी बर्दाश्त नहीं करती। मैं स्वयं एक माँ हूँ। डर जाती हूँ। कई तरह के संशय घेर लेते हैं। मैं अपना दुख-दर्द किससे साझा करूँ। अपने पति सुदेश से? वह बच्चों को दोस्तों की तरह समझता है। मुझे कई बार लगा है कि वह खुद बच्चों से डरने लगा है। वह उनके सामने स्वयं को बौना समझने लगा है। मैं अधिक ही ज़ोर डालूँ तो वह लंबा-चौड़ा भाषण देना शुरू कर देता है। मुझे उसकी बहुत सी बातें समझ में नहीं आतीं। पिछले महीने ही पूनम को लेकर हमारा आपस में झगड़ा हो गया था। उसने उतावली में बताया था, "तू समझती क्यों नहीं? आज सूचनाओं का इतना बड़ा ढेर हमारे सामने आ जाने से स्थितियाँ बहुत जटिल हो गई हैं। कई तरह के सच है। अर्द्धसत्य हैं। ये सभी एक ही समय में परोसे जा रहे हैं। ऐसी स्थिति में नई पीढ़ी के राह का रोड़ा नहीं बनना चाहिए। यहाँ बाजार का दबाव है, परिस्थितियों का दबाव है, सूचनाओं का दबाव है। ये स्थिति चिंताजनक है। बच्चों का बड़ा सपना रोजी-रोटी है। बंदिशों में इनका विकास नहीं होगा। यू नो - चेंज इज दा लॉ ऑफ नेचर...।" मुझे घर में बैठी को इन बातों का क्या पता। मैंने अपनी चिंताएँ सुदेश के कुलीग रमन की पत्नी कमलेश से साझी की थीं। उसने मुझे समझाया था, "बच्चों को ज्यादा रोकना, टोकना नहीं चाहिए। उन्हें समझना चाहिए। वह भी प्यार से। सख़्ती से वे बागी हो जाएँगे। एक बार बागी हो गए तो दुबारा उनको पटरी पर लाना कठिन काम है। मेरे ख़याल में हमारे बच्चे हमसे अधिक समझदार हैं।"

माँ की कई बातें ठीक भी थीं। बच्चों को समय से सोना चाहिए। समय से उठना चाहिए। अधिक समय तक घर से बाहर नहीं रहना चाहिए। कोई किसी की इज्ज़त का साझीदार नहीं होता। खासतौर पर लड़कियों का। इसीलिए मैंने जब बातों-बातों में पूनम को घूरा था कि उसका घर से इतनी-इतनी देर तक बाहर रहना ठीक नहीं, तो उसने मुझे इस तरह लेक्चर दिया था जैसे एक बड़ा छोटे को समझाता है - "मम्मी, तुम अच्छे-भले समझदार होकर इतने बैकवर्ड क्यों हो जाते हो। तुम्हारे अंदर से नानी बोलने लगती है। मैंने तुम्हें कितनी बार बताया है कि यह कंप्यूटर और मार्किटिंग का युग है।

पूनम ने कंप्यूटर मेंटिनेंस में बी.एससी. की है। वह दौड़ी फिरती है। पता नहीं लगता, वह किस-किस को फोन करती है। किस-किस से मिलती है। कंप्यूटर पर इंटरनेट की फाइलें देखती-पढ़ती रहती है। छोटी-मोटी जॉब उसके नाक तले नहीं आती। एक दिन उसने बताया था कि उसे पंद्रह हजार रुपये महीना की ऑफर आई थी। उसने इनकार कर दिया था। उसका ख़याल था कि शुरुआत अच्छी होनी चाहिए। उसे सैट होने की जल्दी है, पर उतनी भी नहीं जितनी मैं सोच रही हूँ। उसने एक और डिप्लोमा शुरू कर दिया था। मैंने पूछा तो उसने बताया था, "सिसको सर्टिफाइड एसोसिएट का डिप्लोमा कर रही हूँ। इंडस्ट्री में जाने का मन बनाया है।" मुझे उसकी पढ़ाई के बारे में कुछ भी पल्ले नहीं पड़ता। मैं बी.ए. सेकिंड इअर पास उसके सामने अनपढ़ हूँ। मैं तो आँखें चौड़ी कर एकटक उसके मुँह की तरफ देखती रहती हूँ। वह अपनी पढ़ाई के बारे में अपने डैडी के साथ ही सलाह-मशवरा करती है। मुझे तो जैसे उसने अनपढ़-गँवार समझ रखा है। उसके डैडी उसे कभी रोकते, टोकते नहीं। उसके रोज के फैशन, उसके खर्चों के बारे में उनको ही पता होता है। वह टॉप, एडीडॉस की ज़ीन और रीबॉक के बूटों से नीचे बात नहीं करती। मैं नाक-भौं सिकोड़ूँ तो वह एक विश्वास के साथ कहती है, "सोसायटी में स्टेट्स रखना पड़ता है।"

माँ को क्या बताऊँ। पहले लड़कियों को पढ़ाया-लिखाया जाता था ताकि उन्हें अच्छा वर मिल जाए। अब उन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर ज़ोर दिया जाता है। पूनम की दुनिया मेरे लिए अनोखी है। वह और उसकी मित्रमंडली कंप्यूटर के आगे बैठ जाती। वे इंटरनेट की भिन्न-भिन्न फाइलें खोलते। बहस करते। भिन्न-भिन्न वेबसाइटें देखते। महीनाभर पहले हरसूरत बता रहा था, "मेलवॉर्न में आर.एम.आई. यूनिवर्सिटी में एम.आई.टी. की डिग्री के लिए एडवरटाइज़मेंट निकली है। मैं अप्लाई कर रहा हूँ। पूनम तू भी अप्लाई कर दे।"

"उनकी क्या कंडीशंस हैं?" पूनम से पहले जसप्रीत ने पूछा था।

"बी.एससी. कंप्यूटर। ये डिग्री करने के बाद ऑस्ट्रेलिया में सैट भी हुआ जा सकता है और इधर भी नेटवर्क पर आसानी से जॉब मिल सकती है।"

"खर्चा?"

"ग्यारह लाख एडमिशन फीस है। साथ ही, वे चार घंटे का वर्क परमिशन कार्ड भी इशू करेंगे। तुम अपने खर्चे लायक कमा सकते हो।"

"ओ.के. आई मस्ट ज्वाइन इट।" जसप्रीत ने एकदम ही हाँ कर दी थी। पूनम चुप लगा गई थी। वह कुछ देर के लिए अपसेट हुई थी। यह उसकी आदत है। घर की स्थिति को देख-जानकर कुछ ही पलों में वह पहले जैसी हो गई थी। उसे अपनी सीमा का पता है। यही उसका खास गुण है। पूनम ने मुझे कॉफी पीने के लिए आवाज़ दी थी। पता नहीं कौन-सी बात थी कि वे सारे तालियाँ बजाकर हँसे थे। बहुत ही ज्यादा खुशी के मूड में थे। मैं आधे मन से उनकी खुशी में शामिल हुई थी। आधा मन चिंताओं से भरा पड़ा था। प्रायः मेरी यही अवस्था रहती है। इससे बाहर निकलने की कोशिश करूँ तो मेरी माँ जबरन मुझमें घुस आती है। मुझे कई डर घेर लेते हैं। मेरी परेशानियाँ बढ़ जाती हैं। अंदर ही अंदर शब्द उभरते हैं, "माँओं को बच्चों के फिक्र मार लेते हैं। मैंने कभी अपनी ज़रूरतों के बारे में नहीं सोचा। अपनी ज़िंदगी अपने ढंग से नहीं जी।" मैं रसोई में जा खड़ी हुई थी।

उसी समय माँ के कमरे में कुछ गिरने की आवाज आई थी। उसने कटोरी या गिलास जान-बूझकर गिराया था। इस समय वह कुछ ज्यादा ही परेशान और दुखी थी। अगर उसका अपना घर होता तो उसने हुक्म सुना दिया होता, "क्या खीं-खीं लगा रखी है। दफ़ा हो जाओ। खबरदार अगर तुम्हारे में से कोई भी दुबारा इस घर में घुसा। यह घर है, कोई रेलवे स्टेशन नहीं।" यहाँ उसकी कोई पेश नहीं जाती थी। पर वह भी अपनी आदत से मज़बूर थी। बातों-बातों में वह पूनम को बहुत कुछ कह भी चुकी थी, पर पूनम ने एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल देने की पॉलिसी बना रखी थी। वह कहती थी कि उसके पास आउट-डेटिड उपदेश सुनने का समय नहीं है। न ही वह अपना ध्यान इस ओर लगाना चाहती है। उसके पास करने के लिए बहुत कुछ है। वह हर बात के बारे में क्लिअर है। उसके पास बीच का कोई रास्ता नहीं है। घर में उसकी सुर अपने छोटे भाई कमलकांत से मिलती है। वह उससे उसके सब्जैक्ट के बारे में पूछती है। उसकी सेलेक्शन जानती है। उसे समझाती है कि आजकल मार्किट में किन विषयों की माँग है। बी.ए., बी.एससी. और बी.काम. का कोई फायदा नहीं रहा। इनसे फास्ट रिजल्ट नहीं मिल रहे। फास्ट फूड, फास्ट एजूकेशन, फास्ट रिजल्ट! कमलकांत भी 'दीदी-दीदी' करता रहता है।

माँ के लिए अब इस घर में कोई जगह नहीं है। अगर उसने यहाँ रहना है तो वह चुपचाप अपनी सेवा करवाती रहे। उसके घर में टोका-टाकी नहीं चलेगी। उसे हरसूरत की 'सत्-श्री-अकाल' को खिले माथे स्वीकारना होगा। फिर, वह कौन-सा छोटे-मोटे घर का है। उनका वैल स्टैब्लिश्ड परिवार है। उसके बैठने-उठने, खाने-पीने का सलीका है। आते-जाते मेरे चरण-स्पर्श करता है। माँ की इज्ज़त करता है। बाकी

लड़के-लड़कियाँ भी ऐसा ही करते हैं। हमें और क्या चाहिए। यह समय ही संपर्कों का है। अकेला बंदा क्या होता है। एक बात और है, जिसे मैंने किसी से साझा नहीं किया। कर ही नहीं सकती। मुझे हरसूरत अच्छा लगता है। मैं चाहती हूँ कि इन दोनों की जोड़ी बन जाए। पर माँ को पता नहीं, हरसूरत में क्या खराबी दीखती है कि लड़का घर में आया नहीं कि इसके माथे पर बल पड़े नहीं। आगे-पीछे वह बुरी नहीं लगती। किसी बात पर गुस्सा नहीं होती। जो दिया, सो खा लिया। जहाँ बैठा दिया, बैठ गई। किसी से कोई शिकायत नहीं। कोई गिला, शिकवा नहीं। जितना पूछा जाता, उतना ही जवाब देती। अधिक समय पाठ करती या टी.वी. पर धार्मिक प्रोग्राम देखती।

मुझे लगता कि मैंने इसे अपने यहाँ लाकर भारी गलती की थी। उसने मेरी शांति भंग की है। खुद ही उसके पास दो महीना रह आती। जब पूनम और हरसूरत अकेले बैठे होते हैं तो मुझे अदृश्य खुशी होती है। मेरे मन में आता है कि उनसे कहूँ कि बच्चो भाग जाओ। ये संसार के बंधन तोड़ दो। मैं तुम्हारे संग हूँ। कुछ नहीं होने वाला। तुम मेरे वाली मौत न मरो। जब मुझे कभी अपने उन दिनों की याद आती है तो मुझे यह जीना फिज़ूल लगता है।

कितने अच्छे थे वे दिन! मैं बी.ए. पार्ट फर्स्ट में पढ़ती थी। कोठी वालों के पुरुषोत्तम से नोट्स की अदला-बदली शुरू की थी। मैं उसके बनाए नोट्स ले लेती। वह पढ़ने और बातें बनाने में बहुत तेज था। उसकी माँ का हमारे घर में आना-जाना था। हमारा उनके घर। हम दोनों ने एक साथ डी.ए.वी. कालेज में दाख़िला लिया था। मेरी माँ उसे सुशील बेटा कहती थी। वह भी हमारे घर आ जाता। माँ के पैर छूता। चोर निगाह से मेरी ओर देख लेता। हमने पीरियड मिस करके धर्मेंद्र की आज़ाद फिल्म देखी थी। चोरी-छिपे मिलने लगे थे। एक दिन माँ बाज़ार गई थी। आम दिनों की तरह पुरुषोत्तम हमारे घर आया था। मैं चाय के दो कप बनाकर अगली बैठक में उसके सामने आ बैठी थी। उसने बग़ैर किसी झिझक के सुझाव दिया था, "मीत, चल कहीं भाग चलें।"

मुझे हैरानी हुई थी कि वह यहाँ तक कैसे सोचे बैठा है। मेरे मन में ऐसा कुछ नहीं था। अगर था तो उसकी मुझे जानकारी नहीं थी।

"एक बार फिर से कहना, क्या कहा?"

"यह छोटा शहर अपने सपनों का शहर नहीं। यहाँ मेरा दम घुटता है। हिम्मत कर। भाग चलें।"

"पल्ले धेला नहीं, कहता है - भाग चलें।"

"हम जीने लायक तो कमा ही सकते हैं," उसकी आँखों में सपने थे। असाधारण सपने! मैंने उनकी भाषा को पढ़ लिया था। मेरा रोम-रोम खड़ा हो गया था। मुझे उसका सुझाव अपना-अपना लगा था। वह उठकर मेरे बगल में आ बैठा था और मेरा हाथ पकड़ लिया था।

हम खामोश बैठे थे। वहाँ सिर्फ़ दिल की तेज़ धड़कनों की आवाज़ थी। समय जैसे ठहर गया था। कुदरत के बनाए दो अनमोल जीव, एक जान होने के लिए उतावले थे। उसके हाथों में तेज़ी आने लगी थी। मैं ख़ुद अपने वश में नहीं रही थी। कुछ था जो मुझे उड़ाए लिये जा रहा था। मैं उत्तेजित हो गई थी। उसने मुझे चूमने के लिए अपना मुँह मेरे करीब किया था या मैं ही उसकी ओर सरकी थी कि तभी ऊपर से माँ आ गई थी। मुझे तो इस बात का ध्यान भी नहीं रहा था कि बाहर वाला दरवाजा खुला था।

मुझसे अधिक दौरे माँ को पड़े थे। वह अर्द्ध-पागल हो गई थी। बैठी-बैठी हँसने लग पड़ती। रोना शुरू कर देती। मुझे इस बात की संतुष्टि थी कि उसने यह बात परिवार के किसी दूसरे सदस्य को नहीं बताई थी। उस दिन जब उसने मुझे और पुरुषोत्तम को बैठे देखा था, वह पिछले कमरे में बिछी सुतली की चारपाई पर औंधे मुँह गिर पड़ी थी। मैं डरती-सहमती एक-दो बार उसके पास गई थी। "माँ, माँ" कहकर पुकारा था। उसने मेरी पुकार का कोई जवाब नहीं दिया था। वह बापू के आने पर भी नहीं उठी थी। बस, इतना भर कहा था, "मैं बहुत ही ज्यादा परेशान हूँ। कुछ भी कर सकती हूँ। भलाई इसी में है कि मुझे न बुलाओ। मुझे अकेला छोड़ दो।"

रात में खाना लेकर गई तो उसने मेरी तरफ देखा तक नहीं था। न ही मेरी बात का कोई हुंकारा भरा था। न रोटी खाई थी। मेरी मिन्नतों, प्रार्थनाओं, माफ़ियों का कोई असर नहीं हुआ था। दूसरा दिन भी यों ही गुजर गया था। तीसरे दिन केसर ने उसको जबरन चाय पिलाई थी। आधा कप पीने के बाद वह बुक्का फाड़कर रोई थी। उसकी चीखें मुझसे सुनी नहीं गई थीं। पाँचेक मिनट बाद वह खिलखिलाकर हँसी थी। केसर बापू को बुलाने चला गया था। मैंने उसे बाँहों में भर लिया था। उसकी हालत पागलों वाली थी। वह कभी हँसने लगती, कभी रोने। मैं स्वयं भी रोई थी। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि माँ को कैसे मनाऊँ। उसके मन पर गहरी चोट लगी थी। फिर वह ज़ोर-ज़ोर से बोलने लग पड़ी। कई नाम लिए उसने। उन्हें गालियाँ निकालीं। बहुत ही गंदी गालियाँ। बेशर्मी की हद तक। मैंने उसके मुँह पर हाथ रख दिया था। कहा था - "माँ... तू जैसा कहेगी, मैं वैसा ही करूँगी। जिसकी चाहे कसम खिला ले। केसर की कसम खाती हूँ।"

"कुत्ती! बदमाश! मेरी नज़रों से दूर हो जा। मैंने सारी उम्र किसी से 'ओए' नहीं कहलवाई, तुझे नई जवानी चढ़ी है।" उसने अपने मुँह पर सिरहाना रख लिया था। बापू ने आते ही कड़े गुस्से में पूछा था कि आखिर बात क्या है। मैं उन्हें क्या बताती कि उसकी यह हालत मेरी वजह से ही हुई है। मैंने ही उसका विश्वास तोड़ा है। मैंने इधर-उधर की कहानी, जो पहले से ही घड़ रखी थी, सुना दी। माँ को कमल मैंटल अस्पताल में दाख़िल करा दिया था। डॉक्टर का कहना था कि इसे कोई गहरा सदमा पहुँचा है। उसे विशेष देखभाल की ज़रूरत है। जिस व्यक्ति के कारण उसकी ऐसी हालत हुई है, उसे इसके सामने न आने दो। मैंने बापू को ज़ोर डालकर मौसी को बुला लिया था। मैंने एक दिन भी कालेज से छुट्टी नहीं की थी। घर को सँभाला था। पढ़ाई का नुकसान भी नहीं होने दिया था। पुरुषोत्तम ने बहाने से कई बार मिलने की कोशिश की थी, पर मैंने उसकी ओर देखा तक नहीं था। उसने मुझे लंबी चिट्ठी लिखी थी। पढ़ते हुए मैं ज़ार-ज़ार रोई थी। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि इस वक्त मेरा रोल कैसा हो। अजीब स्थिति थी मेरी। मैं न दुख में थी, न सुख में। कभी पुरुषोत्तम का चेहरा दिखता, कभी माँ की डरावनी शक्ल। मुझ पर गुनाह की भावना भारी होने लगी थी। मैं अस्पताल तभी जाती थी जब माँ को नींद वाला इंजेक्शन लगा होता।

एक दिन गली-मोहल्ले की बातें चलीं तो मैंने माँ से पूछा था, "माँ, वह कोठी वालों का पुरुषोत्तम हुआ करता था...।"

"मीतो, उनका कारोबार बहुत बढ़िया। पुरुषोत्तम के दो बेटे हैं। दोनों इंग्लैंड चले गए। पुरुषोत्तम कालेज में पढ़ाता है। उसकी घरवाली बैंक में लगी हुई है।"

शायद माँ को भी वह घटना याद आ गई हो। सारा दिन मैं उखड़ी-उखड़ी रही थी। सिर में गुबार-सा चढ़ता-उतरता रहा था। मैं फिर उसके कमरे में नहीं गई।

पूनम की माँ से अधिक बनती नहीं है। माँ उसे बाँह से पकड़कर बिठा लेती। अपने पास से उठने न देती। माँ उससे कुछ ज्यादा ही प्यार करती है। उसके बचपन से ही। ननिहाल-ददिहाल में वह पहली औलाद थी। दोनों घर उसे बेटा समान समझते। मैं माँ से मिलने जाती तो माँ रात में पूनम को अपने संग सुला लेती। वापसी पर उसकी आँखें भर आतीं। वह भरे मन से कहती, "इस बेटे को यहीं छोड़ जा।" फिर उसके ख़त आते। संदेशे मिलते। मिडल पास करने तक पूनम भी माँ को बहुत प्यार करती रही थी। छुट्टियाँ होतीं तो वह माँ के पास छोड़ आने की जिद्द करती या ख़त लिखकर माँ को यहाँ बुला लेती। माँ उस पर नानी वाला हक जमाती। यह सिलसिला प्लस-टू तक निर्विघ्न चलता रहा। दोनों की जान एक-दूजे में बसती थी। कालेज ज्वाइन करते ही

पूनम के स्वभाव में कई तब्दीलियाँ आ गईं। माँ का अस्तित्व पीछे छूट गया। उसके सर्किल की लड़कियाँ-लड़के उसके करीब आने लगे। अब उसे माँ की अधिकांश आदतें पसंद नहीं थीं। वह कहती कि माँ को घुमा-फिराकर बात करने की आदत है। वह किसी भी शै, आदमी के बारे में स्पष्ट राय नहीं रखती। बचपन वाला प्यार याद आता तो माँ के पास बैठ नई बातें छेड़ लेती। माँ उसे कहती, "चुप रह ए लड़की, मुझे सब पता है।"

"आपको क्या पता? न आपको पता है, ना आपकी बेटी को?" उसका इशारा मेरी तरफ होता।

"तू तो जैसे सयानी ही पैदा हो गई।"

"देखो आप 1947 से पहले के हो। यानी कि बेबी बूमर क्लास। मम्मी साठ के बाद के। यह हो गई जनरेशन एक्स। मैं इक्यासी की हूँ। जनरेशन वाई।"

माँ को उसकी इन बातों की समझ न पड़ती। वह कहती, "तू ऊटपटाँग क्या बोले जा रही है। सीधी बात कर।"

पूनम इस बात को जानने लगी थी कि माँ को सीधी बात से परेशानी होती थी। इसलिए उसको समझाने के लिए उसे भूमिका बाँधनी पड़ती थी।

एक दिन पूनम माँ को उठाकर लॉबी में ले आई। उसने नेशनल ज्योग्रोफिक चैनल लगा दिया। अंग्रेज ने शेर का बच्चा पाल रखा था। वह बच्चे को दूध पिलाता। बच्चा अंग्रेज से बहुत प्यार करने लगा। उसकी आदतें शेर वाली नहीं रही थीं। अंग्रेज चाहता था कि बच्चा अपने असली रूप में आए। वह उसे जंगल में ले गया। उसे खुला छोड़ दिया। अब उसे अपनी खुराक खुद खोजनी थी। वह घरेलू शेर था - इसलिए उसे पता नहीं चल रहा था कि शिकार पर कैसे वार करना है। जब शिकार पर झपटा तो उसने अपना पंजा तुड़वा लिया। अंग्रेज ने उसे उठाया और जानवरों के डॉक्टर के पास ले गया। डॉक्टर ने शेर को अर्द्ध-बेहोशी का टीका लगाया और पंजे की सर्जरी कर दी।

माँ ने दाँतों तले उँगली दबा ली, "कमाल है गोरे की। वारे जाऊँ इस काम के। मैंने खुद लाहौर में अंग्रेज देखे थे।"

फिर, पूनम ने 'टी' चैनल लगा दिया। माँ चीख उठी, "तू मुझे ये सब दिखाने के लिए लाई है?" उसने आँखों के आगे चुन्नी फैला ली, "रहने दे ऐ चालाक लड़की! बंद कर यह कंजरखाना। दुनिया का बेड़ा गरक होने को आया।"

"इसमें क्या बुरा है? दुनिया भर के फैशन घर बैठे-बिठाए देख लो।"

"मुझसे नहीं ये लुच्चापन देखा जाता।"

माँ खीझकर उठी थी और अपने कमरे में आ गई थी। उसने मुझे ऊँची आवाज़ में पुकारा था। मैं रसोई में व्यस्त थी। कुछ देर बाद गई तो उसने कहा था, "मैं तो भूल ही गई कि मैंने तुझे किस बात के लिए आवाज़ दी थी।" वह कुछ नहीं भूली थी। वह कुछ भी नहीं भूलती। कभी सब्र कर जाती, कभी बौखलाने लगती। मुझे माँ पर तरस आ गया था। मैं उसे जबरन उठा लाई थी और 'संस्कार' चैनल लगा दिया था। वह माई प्रीती के प्रवचन सुनने में मस्त हो गई थी।

मैंने कभी पूनम को किसी काम के लिए नहीं कहा। उसके पास फालतू समय हो तो वह खुद मेरा हाथ बँटाने लग जाती है। कई अन्य इधर-उधर के काम कर देती है। लेकिन, उसे रसोई के काम करने में मौत दिखाई देती है, "इट इज बोरिंग जॉब। कितना समय नष्ट होता है। मैं तो फास्ट फूट ही खाऊँगी।" मैंने बताया, "औरत के आधे साँस रसोई में होते हैं और आधे अपनी औलाद में।"

मुझे तो ब्यूटी-पॉर्लर भी पूनम ही लेकर गई थी।

"तुमने खुद को अभी से बूढ़ी मान लिया। देखो, तुम्हारी उम्र ही कितनी है। तुम्हें अपनी फेस ब्यूटी पर ध्यान देना चाहिए। शीशे के सामने खड़े होकर देखो - तुम्हारी पलकों के नीचे कितने ब्लैक स्पॉट उभरे हुए हैं।"

अब अगर मैं महीने में एक-आध बार न जाऊँ तो वह मुझे स्मरण करवा देती है या मुझे अपने संग ले जाती है।

मैं कोशिश करती कि मेरे अंदर बैठी माँ हमेशा के लिए सो जाए। मेरे अंदर से मेरी बेटी वाला अक्स उभरे। यह बहुत कठिन काम था। जितना मैं आगे बढ़ती, यह उतना ही मेरी टाँग खींचकर पीछे को ले जाती। यह सबकुछ माँ के यहाँ आने पर हुआ। उसके उपदेश, टोका-टाकी मुझे घेरे रहते। मेरी आदतों पर पूनम को जल्द ही गुस्सा आ जाता। वह मुझे माँ की कॉर्बन कापी कहती। एक दिन वह मुझसे विस्तार में बतियाने लगी थी, "मुझे छोटे मामा जी से पता चला कि भापा जी ने माँ को बहुत सारी छूटें दे रखी थीं। उन्होंने माँ की कभी किसी गलत राय का विरोध नहीं किया था। जो माँ कर देती, भापा जी को वह मंजूर होता था। इसी बात ने माँ को बिगाड़ दिया था। माँ चाहने लगी थी कि सबकुछ उसकी इच्छानुसार हो। वह रूठ कर, लड़कर अपनी बात मनवा

लेती थी। उसने कभी अपने बग़ैर किसी दूसरे की परवाह नहीं की थी। यहीं से सिस्टम खराब हुआ था। वह यह बात बिलकुल भूल चुकी थी कि कोई उससे छोटा भी समझदारी की बात कर सकता है। ...मैं उनके सारे डाटा कंप्यूटर में फीड कर रही हूँ। ...उसका सार भी तुम्हें पढ़ाऊँगी। कंप्यूटर की राय भी लूंगी।" वह कहाँ तक सोचती है, मैं मन ही मन सोचती।

पूनम की कोशिश है कि वह मुझे मार्डन बनाएगी। वह कहती, "आज के समय में वही कामयाब होगा, जिसके पास शार्प ब्रेन होगा। ...जब परिवार में दोनों जीव कमाऊ हों, तब किसी पर आर्थिक निर्भरता कम हो जाती है। तुम्हारी ज़िंदगी की भी यही गलती है। कहीं अकेले में बैठकर सोचना।"

पूनम की बात सच थी। विवाह के पहले पंद्रह साल बहुत कठिन बीते थे। सुदेश की तनख़्वाह से घर का खर्चा बमुश्किल चलता था। ऊपर से कबीलदारी के खर्चे। सुदेश के सीनियर सहायक बनने और अच्छी सीट मिलने पर घर का नक्शा बदला था। मैंने उसे पल-पल मरते देखा था। मैं स्वयं पल-पल मरी थी। उसकी चार बहनें थीं। नित्य किसी न किसी का कोई दिन-त्यौहार आ जाता। जो दो पैसे जुड़ते थे, वे उधर निकल जाते थे। सुदेश कहता, "हमने तो बुरा समय काट लिया। बस, बच्चे सैट हो जाएँ, यही अपनी प्राप्ति होगी।" ऊपर से अच्छी बात यह हुई कि हम छोटा शहर छोड़ आए थे। वहाँ का मकान बेच कर यहाँ अपनी मर्जी की कोठी बना ली थी। सुदेश कहता, "अगर मैं नूरमहल रहता तो कुएँ का मेंढक ही बना रहता। बड़े शहर की बड़ी बातें होती हैं। यहाँ बच्चों का भविष्य सुरक्षित है।"

शाम को पूनम का फोन आया था, "मम्मी, मैंने साढ़े सत्तानवें परसेंट नंबर लिए हैं।"

"तेरा रिजल्ट आज ही आ गया?"

"हाँ, पाँच मिनट पहले कंप्यूटर पर आ गया। मॉनीटर पर क्वेशचन्स आते थे। मैं साथ-साथ जवाब देती गई। इधर आख़िरी क्वेशचन का जवाब दिया, उधर रिजल्ट भी आ गया।"

"आज बड़ी खुशियों वाला दिन चढ़ा है। तेरा मोबाइल बंद था। तुझे एक और खुशी की बात बताऊँ, यह भी तेरे लिए सरप्राइज़ होगा। हरसूरत का फोन आया था। माँ ने सुना था। उसे ऑस्ट्रेलिया का वीज़ा मिल गया।" मुझे पूनम से अधिक हरसूरत को लेकर खुशी हुई थी।

एक पल के लिए पूनम ने कोई उत्तर नहीं दिया था। फिर वह जल्दी-जल्दी बोली थी, "यह भी अच्छी खबर है। हम उसे पार्टी देंगे। आज ही शाम को। फिर मैं बिजी हो जाऊँगी। तुम ऐसा करो, बस-स्टैंड वाली बस पकड़कर आ जाओ। हम मार्किट से सामान खरीद लेंगी। ठीक है न। घर लौटकर ही हरसूरत को फोन करूँगी।"

हम सामान खरीद कर घर पहुँचीं तो लॉबी में हरसूरत के पास माँ बैठी थी। यह हम दोनों के लिए आश्चर्य की बात थी। माँ तो उसे अथाह नफ़रत करती थी। वह तो उसे देखकर कभी खुश न होती थी। आज यह कैसे हो गया? माँ मुझे बार-बार कहा करती थी, "इस लड़के का चाल-चलन अच्छा नहीं लगता। पूरा शेखीबाज लगता है। इसके कपड़ों की तरफ देखकर खीज आती है। इसे कह कि ये हमारे घर न आया करे। अगर तुझे कहने में संकोच होता है तो मैं कह देती हूँ।" मैंने उससे कहा था कि इस बारे में पहले पूनम से पूछ ले। माँ पूनम से बचती थी। शायद, डरती भी हो। पूनम का क्या पता, आगे से क्या कह दे। क्या की क्या सुना दे।

माँ हरसूरत से कह रही थी, "बेटा, मेहनत से बंदा क्या नहीं कर सकता। तू बाहर जा रहा है। जाकर पूनम को भी बुला लेना। मेरी लिए बढ़िया सा सूट भेजना। देखना भूल न जाना... वादा कर।"

हम दोनों बाहरवाले दरवाजे पर खड़ी होकर माँ का ड्रामा देख रही थीं। पूनम से रहा नहीं गया था। उसने धीमे से मेरे कान में कहा, "मम्मी जी, मैं मानूँ या न मानूँ, तुम मानो या न मानो, पर माँ जी ने हरसूरत को मेरे लिए चुन लिया। देखो, माँ जी क्या कर रहे हैं। अब माँ जी को तुम ही बताओ - हरसूरत मेरा रीयल लाइफ हीरो नहीं है। उसके जैसे मेरे पाँच और मित्र हैं।"

माँ ने पूनम को बधाइयाँ दी थीं। उसे कसकर जफ्फी डाली थी। प्यार किया था। पर पूनम ने माँ की ओर ध्यान ही नहीं दिया था। न ही उसकी किसी बात का उत्तर दिया। वह हरसूरत के पास जा बैठी थी। मुझे खुशी ने आ घेरा था। क्या मालूम - पूनम ऊपरी मन से कह रही हो। ये खुशी के पल मैं सुदेश से साझा करना चाहती थी। मैं उसके दफ़्तर में फोन करने ड्राइंगरूम में गई तो सुना, पूनम कह रही थी, "हरसूरत, तुझे एक बात और बताऊँ। यह भी खुशी वाली बात है। इसके बारे में अभी तक मैंने किसी को नहीं बताया। इवन मम्मी को भी नहीं। मुझे एक्सकोर्ट की ओर से ऑफर आई है। बीस हजार रुपये तनख्वाह। अकमोडेशन फ्री। मैं अगले हफ़्ते फरीदाबाद ज्वाइन करने जा रही हूँ। आने वाले दिनों के बारे में मैं कुछ नहीं कह सकती। तू अपनी पढ़ाई की तरफ ध्यान देना। अगर पाकेट अलाऊ करे तो कभी-कभी फोन कर लिया करना...।"

मेरे सिर में चक्कर-सा आ रहा था। अब मैं माँ को यह बात कैसे समझाऊँ कि...।

—— X ——